

घनश्याम दास गुप्ता

बनाम

देवी लाल और अन्य

फ़रवरी 8, 1989

[एम.एच. कानिया और ललित मोहन शर्मा, न्यायमूर्तिगण]

बिहार भवन (पट्टा, किराया और बेदखली) अधिनियम, 1947: धारा 11(1)(डी)-किराए के भुगतान में चूक-अधिनियम के क्षेत्र में लागू होने से पहले की अवधि के लिए-क्या किरायेदार उस आधार पर बेदखल होने के लिए उत्तरदायी है?

अपीलकर्ता को पट्टे के दस्तावेज़ के तहत प्रश्नगत भवन में किरायेदार के रूप में रखा गया था। चूंकि पट्टा विधि के अनुसार निष्पादित नहीं किया गया था, इसलिए यह अप्रभावी रहा। पट्टा अवधि समाप्त होने के बाद, मकान मालिक ने अपीलकर्ता को बेदखल करने और किराए के बकाया की वसूली के लिए मुकदमा दायर किया। वाद की सुनवाई के दौरान, बिहार किराया अधिनियम के प्रावधान उस क्षेत्र में लागू कर दिए गए, और इस प्रकार बेदखली की राहत वापस लेने की प्रार्थना को नए सिरे से वाद दायर करने की अनुमति के साथ स्वीकार कर लिया गया। हालांकि, किराए के बकाया की वसूली का आदेश पारित कर दिया गया। इसके बाद एक नया वाद दायर किया गया। विचारण न्यायालय ने व्यक्तिगत आवश्यकता और किराए के भुगतान में चूक, दोनों आधारों पर वाद का फैसला सुनाया। अपील पर, अधीनस्थ न्यायाधीश ने वास्तविक व्यक्तिगत आवश्यकता के प्रश्न पर निर्णय को पलट दिया; लेकिन चूक के आधार पर फैसले को बरकरार रखा। उच्च न्यायालय ने अपील पर फैसले को बरकरार रखा।

विशेष अनुमति से दायर यह अपील उच्च न्यायालय के फैसले के विरुद्ध है।

अपीलकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया कि किराया न चुकाना (जब बिहार किराया अधिनियम उस क्षेत्र में लागू नहीं था) प्रासंगिक नहीं है और इसलिए इसे बेदखली के आदेश का वैध आधार नहीं बनाया जा सकता। उत्तरदाता की ओर से यह निवेदन किया गया कि बिहार किराया अधिनियम से स्वतंत्र रूप से भी अपीलकर्ता का मासिक किराया नियमित रूप से चुकाने का कर्तव्य था और चूक के लिए, उसे अधिनियम की धारा 11(1)(डी) के तहत बेदखली के लिए उत्तरदायी माना जाना चाहिए।

इस अपील को स्वीकार करते हुए,

अभिनिर्धारित किया: 1. इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह अधिनियम संबंधित क्षेत्र पर दिनांक 14.2.1970 से भविष्य में लागू हुआ था। प्रश्न- क्या विधानमंडल का उद्देश्य किराए के भुगतान में किरायेदार की पिछली चूक को बेदखली के आधारों में शामिल करना था, इसका उत्तर बिहार किराया अधिनियम के संबंधित प्रावधानों की भाषा की व्याख्या करके दिया जाना चाहिए। [555 सी-डी]

2. सामान्यतः, यदि कोई किरायेदार किराया देता है और मकान मालिक बिना किसी उचित कारण के किराया अस्वीकार कर देता है, तो किरायेदार को अपना कर्तव्य पूर्णतः निभा चुका माना जाता है। हालांकि, बिहार किराया अधिनियम के तहत स्थिति थोड़ी भिन्न है। मकान मालिक द्वारा किरायेदार द्वारा विधिवत रूप से दिए गए किराए को अस्वीकार करने पर भी, किरायेदार धारा 13(1) में उल्लिखित अतिरिक्त कर्तव्य के तहत मकान मालिक को डाक मनी ऑर्डर द्वारा किराया भेजने के लिए बाध्य है। यदि किराया प्राप्त करने के हकदार व्यक्ति के बारे में वास्तविक संदेह उत्पन्न होता है, तो किरायेदार को धारा 13(2) के तहत निर्धारित तरीके से किराया जमा करने की अनुमति है। ऊपर उद्धृत धारा 11(1)(डी) का उत्तरार्थ उन मामलों से संबंधित है जिन पर धारा 13 लागू होती है। इसका परिणाम यह है कि यदि किसी किरायेदार ने किराया चुकाने का उचित प्रस्ताव दिया है और मकान मालिक ने अनुचित रूप से इसे स्वीकार करने से इनकार कर दिया है, तो किरायेदार खंड

(डी) के तहत बेदखली के दायित्व से नहीं बच सकता, जब तक कि वह यह साबित न कर दे कि उसने डाक द्वारा मनी ऑर्डर के माध्यम से किराया भेज दिया था। यह स्थिति पूरी तरह से स्थापित है। यदि स्थिति का इस दृष्टिकोण से विश्लेषण किया जाए तो यह देखा जाएगा कि खंड (डी) केवल वहीं लागू हो सकता है जहाँ बिहार किराया अधिनियम की धारा 13 लागू होती है। यदि धारा 13 किसी विशेष स्थिति पर लागू नहीं होती है, तो खंड (डी) भी लागू नहीं होगा। धारा 13 स्पष्ट रूप से अधिनियम के संबंधित क्षेत्र में विस्तारित होने से पहले लागू नहीं हो सकती थी। परिणामस्वरूप, यह माना जाना चाहिए कि पूर्व अवधि के लिए चूक धारा 11(1)(डी) के तहत बेदखली के आदेश का आधार नहीं हो सकती। [1557 जी-एच ; 558 ए -सी]

के.सी. जैन बनाम बी.एस. गेवाल और अन्य, [1965] 2 एस.सी.आर. 36 से विशिष्ट।

3. चूंकि यह प्रश्न पक्षों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों के मूल्यांकन पर निर्भर है, इसलिए वाद को प्रथम अपीलीय न्यायालय को इस प्रश्न पर निर्णय के लिए वापस भेजा जाना चाहिए कि क्या मकान मालिक ने दिसंबर 1973 से अप्रैल 1974 की अवधि के लिए किराए के भुगतान में किरायेदार की चूक को सिद्ध कर दिया है। यदि अधीनस्थ न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि किरायेदार ने इस अवधि के दौरान दो महीने या उससे अधिक समय तक अधिनियम की धारा 11(1)(डी) के अर्थ में चूक की है, तो वे वाद को स्वीकार करेंगे; अन्यथा वाद खारिज कर दिया जाएगा। [559 बी-सी]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: दीवानी अपील संख्या 2984/1983।

पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 19.5.1982 के निर्णय और आदेश से, अपीलीय डिक्री संख्या 275/1981 में।

अपीलकर्ता की ओर से गोविंद मुखोती और के.एन. राय उपस्थित हुए।

उत्तरदाताओं की ओर से एफ.एस. नरीमन और रंजीत कुमार उपस्थित हुए।

न्यायालय का निर्णय जिनके द्वारा सुनाया गया।

शर्मा, न्यायमूर्ति। विशेष अनुमति से दायर इस अपील में यह प्रश्न उठता है कि क्या बिहार भवन (पट्टा, किराया और बेदखली) अधिनियम, 1947 (जिसे आगे बिहार किराया अधिनियम कहा गया है) के विस्तारित होने और लागू होने से पहले की अवधि के लिए किराए का भुगतान न करने पर, उसे बिहार किराया अधिनियम, 1947 की धारा 11(1) के खंड (डी) के तहत चूककर्ता माना जा सकता है और, इसलिए, उसे बेदखल किया जा सकता है।

2. विचाराधीन भवन पटना नगर के निकट दानापुर छावनी क्षेत्र में स्थित है। अपीलकर्ता को मकान मालिक जानकी देवी द्वारा एक निश्चित अवधि के लिए पट्टे के दस्तावेज के तहत किरायेदार के रूप में रखा गया था। चूंकि यह विलेख कानून की आवश्यकताओं के अनुसार निष्पादित नहीं किया गया था, इसलिए यह अप्रभावी रहा। अवधि समाप्त होने के बाद, जानकी देवी ने दिनांक 10.12.1968 को अपीलकर्ता को बेदखल करने के लिए और मई से अगस्त 1968 की अवधि के लिए किराए के बकाया की वसूली हेतु एक वाद दायर किया, जिसे स्वत्व बाद सं. 317/1968 के रूप में पंजीकृत किया गया। बिहार किराया अधिनियम उस समय दानापुर छावनी पर लागू नहीं था। मामले की सुनवाई के दौरान, दिनांक 14.2.1970 को बिहार किराया अधिनियम के प्रावधान इस क्षेत्र में लागू किए गए। संभवतः इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पट्टा विलेख विधि की दृष्टि में वैध नहीं माना जा सकता, वादी ने बेदखली की राहत वापस लेने की प्रार्थना की, जिसे नए सिरे से वाद दायर करने की अनुमति के साथ स्वीकार कर लिया गया। हालांकि, किराए के बकाया के लिए डिक्री पारित की गई।

3. वर्तमान मुकदमा दिनांक 28.5.1974 को अपीलकर्ता को *वास्तविक* व्यक्तिगत आवश्यकता और मई से जुलाई, अक्टूबर और नवंबर 1968, दिसंबर 1969 से फरवरी 1970 और दिसंबर 1973 से अप्रैल 1974 की अवधि के किराए के भुगतान में चूक के आधार पर बेदखल करने के लिए दायर किया गया था। विचारण न्यायालय ने दोनों आधारों पर वाद का

फैसला सुनाया। अपीलकर्ता द्वारा अपील किए जाने पर, माननीय अधीनस्थ न्यायाधीश ने वास्तविक व्यक्तिगत आवश्यकता के प्रश्न पर निर्णय को पलट दिया, लेकिन चूक के आधार पर डिक्री को बरकरार रखा। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा डिक्री को बरकरार रखा है।

4. अपीलकर्ता ने किराए के भुगतान में चूक के आरोप से इनकार किया। प्रथम अपीलीय न्यायालय ने साक्ष्यों पर विचार करने के बाद पाया कि अपीलकर्ता ने मई, जून, जुलाई, अक्टूबर और नवंबर 1968 तथा दिसंबर 1969 से फरवरी 1970 तक के किराए के भुगतान में चूक की थी, और इसी आधार पर वाद को डिक्री किया। अपीलकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया है कि दिनांक 14.2.1970 से पहले की अवधि के लिए किराए का भुगतान न करना (जब बिहार किराया अधिनियम छावनी क्षेत्र पर लागू नहीं था) प्रासंगिक नहीं है, और चूंकि बिहार किराया अधिनियम के लागू होने के बाद फरवरी 1970 में एक महीने से कम का किराया बकाया रहा, इसलिए इसे बेदखली के आदेश का वैध आधार नहीं बनाया जा सकता। उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता से सहमति जताते हुए कहा कि बिहार किराया अधिनियम छावनी क्षेत्र पर पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू नहीं होता, लेकिन आगे बढ़ते हुए न्यायालय ने कहा कि *कपूरचंद जैन बनाम बी.एस. ग्रेवाल* और अन्य, [1965-2] एससीआर 36 के निर्णय के मद्देनजर, यह माना जाना चाहिए कि अधिनियम, यद्यपि भविष्य में लागू होता है, पिछली अवधि के किराए के भुगतान में चूक को ध्यान में रखता है।

5. इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह अधिनियम संबंधित क्षेत्र पर दिनांक 14.2.1970 को भावी प्रभाव से लागू किया गया था। यह प्रश्न कि क्या विधानमंडल का उद्देश्य किराए के भुगतान में किरायेदार की पिछली चूक को बेदखली के आधारों में शामिल करना था, बिहार किराया अधिनियम के संबंधित प्रावधानों की भाषा की व्याख्या करके ही उत्तर दिया जा सकता है। यद्यपि *कपूर चंद* के मामले (उपरोक्त) में इसी प्रकार का विवाद उठाया गया था, लेकिन दोनों कानूनों की भाषा में अंतर के बावजूद निर्णय को लागू करना अनुमेय नहीं है।

यह सत्य है कि पंजाब भूमि कार्यकाल सुरक्षा अधिनियम, 1953 (जिसे आगे पंजाब अधिनियम कहा गया है) की धारा 9, जो सूचित किए गए वाद में प्रासंगिक थी, किरायेदार की बेदखली के आधारों से भी संबंधित थी; लेकिन धारा में स्पष्ट संकेत था कि बेदखली के आधारों में पिछली चूक भी शामिल थी। निर्णय में उद्धृत धारा का प्रासंगिक भाग इस प्रकार है:

“9(1) किसी अन्य कानून में किसी बात के होते हुए भी, कोई भूस्वामी किसी किरायेदार को बेदखल करने के लिए तब तक सक्षम नहीं होगा, जब तक कि ऐसा किरायेदार:

(i) इस अधिनियम के अधीन आरक्षित क्षेत्र पर किरायेदार न हो या किसी छोटे भूस्वामी का किरायेदार न हो; या

(ii) पर्याप्त कारण के बिना नियमित रूप से किराया न चुकाता हो; या

(iii) इस अधिनियम के प्रारंभ होने पर किराया बकाया हो;

या

.....

स्पष्टीकरण- खंड (iii) के प्रयोजनों के लिए, किसी किरायेदार को इस अधिनियम के प्रारंभ होने पर किराया बकाया केवल तभी माना जाएगा, जब बकाया का भुगतान किरायेदार द्वारा उस डिक्री या आदेश के निष्पादन की सूचना की तिथि से दो महीने की अवधि के भीतर न किया गया हो, जिसमें उसे ऐसे बकाया का भुगतान करने का निर्देश दिया गया हो।”

यह देखा जाएगा कि खंड (iii) स्पष्ट रूप से पंजाब अधिनियम के लागू होने से पहले की अवधि के किराए के बकाया को संदर्भित करता है। मकान मालिक- उत्तरदाता के विद्वान अधिवक्ता डॉ. वाई.एस. चिताले ने तर्क दिया कि इस न्यायालय का निर्णय पंजाब अधिनियम

की धारा 9(1) के खंड (ii) की व्याख्या पर आधारित है, जिसमें खंड (iii) के समान कोई शब्द नहीं हैं। उन्होंने निम्नलिखित टिप्पणी पर जोर देते हुए कहा:

"हमारी राय में, नई धारा के लागू होने से पहले किरायेदार के आचरण को ध्यान में रखा जा सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि किसी कानून को भावी रूप से लागू किया जाना चाहिए। लेकिन किसी कानून को पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किया जाता है क्योंकि उसकी क्रियाशीलता के लिए आवश्यक शर्तों का एक हिस्सा उसके पारित होने से पहले के समय से लिया जाता है। विचाराधीन खंड किसी विशेष आचरण को बेदखली के आवेदन का आधार बनाता है।"

यह तर्क दिया गया कि बिहार अधिनियम में समान प्रावधान हैं और *कपूर चंद* मामले में दिया गया निर्णय पूर्णतः लागू होता है। दोनों अधिनियमों की भाषा में महत्वपूर्ण अंतर को देखते हुए, हम इस तर्क को स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हैं।

6. पंजाब अधिनियम की योजना और उसमें प्रयुक्त भाषा, विशेष रूप से धारा 9(1) के खंड (iii) में उल्लिखित शब्दों को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट है कि अधिनियम ने बेदखली के आधारों के रूप में किराए के भुगतान में पूर्व चूक को ध्यान में रखा है। *कपूर चंद* वाद में इस धारा की व्याख्या को लेकर कोई विवाद नहीं था। इस न्यायालय के समक्ष उठाया गया मुद्दा यह था कि क्या किरायेदार के पूर्व आचरण को भावी रूप से लागू होने वाले कानून द्वारा वैध रूप से ध्यान में रखा जा सकता है। और इस मुद्दे का उत्तर मकान मालिक के पक्ष में दिया गया था। हमारे समक्ष मामले में अपीलकर्ता यह तर्क नहीं दे रहा है कि यदि विधानमंडल चाहे तो किरायेदार के पूर्व आचरण को ध्यान में नहीं रख सकता। प्रश्न यह है कि क्या इस प्रकार के इरादे को बिहार किराया अधिनियम की धारा 11(1)(डी) से स्पष्ट किया जा सकता है, जो इस प्रकार है:

"11. किरायेदारों की बेदखली। (1) किसी अनुबंध या कानून में इसके विपरीत कुछ भी निहित होते हुए भी, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 और धारा 12 के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, जहां कोई किरायेदार किसी भवन पर कब्जा रखता है, उसे न्यायालय द्वारा निम्नलिखित में से एक या अधिक आधारों पर पारित डिक्री के निष्पादन के अलावा, उस भवन से बेदखल नहीं किया जा सकता है:

(ए)

.....

(डी) जहां किरायेदार द्वारा वैध रूप से देय दो महीने के किराए की राशि अनुबंध द्वारा निर्धारित समय के भीतर या, ऐसे अनुबंध के अभाव में, उस महीने के अंतिम दिन तक, जिसके लिए किराया देय है, भुगतान न किए जाने के कारण या धारा 13 के अनुसार वैध रूप से जमा या प्रेषित न किए जाने के कारण बकाया है;"

7. डॉ. चिताले ने जोर देकर तर्क दिया है कि बिहार किराया अधिनियम से स्वतंत्र रूप से भी, किरायेदार-अपीलकर्ता का संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम के प्रावधानों के तहत संबंधित माह तक नियमित रूप से मासिक किराया अदा करने का कर्तव्य था, और यदि वह अपने कर्तव्य के उचित पालन में चूक करता है, तो धारा 11(1)(डी) को अधिनियमित करते समय विधानमंडल द्वारा उसे बेदखली के लिए उत्तरदायी माना जाना चाहिए। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि खंड (डी) किरायेदार पर कोई नया कर्तव्य नहीं थोप रहा है जो पहले नहीं था। अधिनियम का उद्देश्य किराया अदा करने में लापरवाही बरतने वाले किरायेदार को इसके लाभों से वंचित करना है, और इसलिए, यह मानने का कोई कारण नहीं है कि उसके पूर्व आचरण को ध्यान में नहीं रखा जाना चाहिए। यह तर्क ठोस प्रतीत नहीं होता क्योंकि यह

खंड (डी) के अंत में उद्धृत निम्नलिखित शब्दों की अनदेखी करता है, जो हमें बहुत स्पष्ट प्रतीत होते हैं:

"...या धारा 13 के अनुसार वैध रूप से किराया न चुकाने या जमा न करने के कारण;"

8. सामान्यतः, यदि कोई किरायेदार किराया देता है और मकान मालिक बिना किसी उचित कारण के किराया अस्वीकार कर देता है, तो किरायेदार को अपना कर्तव्य पूर्ण माना जाता है। हालाँकि, बिहार किराया अधिनियम के अंतर्गत, स्थिति थोड़ी भिन्न है। मकान मालिक द्वारा किरायेदार द्वारा वैध रूप से दिए गए किराए को अस्वीकार करने पर भी, किरायेदार का धारा 13(1) में उल्लिखित अतिरिक्त कर्तव्य है कि वह डाक द्वारा किराया मकान मालिक को भेजे। यदि किराया प्राप्त करने के हकदार व्यक्ति के बारे में *वास्तविक* संदेह उत्पन्न होता है, तो धारा 13(2) के अंतर्गत किरायेदार को निर्धारित तरीके से किराया जमा करने की अनुमति है। धारा 11(1)(डी) का उत्तरार्ध, ऊपर उद्धृत, उन मामलों से संबंधित है जिन पर धारा 13(1) लागू होती है। इसका परिणाम यह है कि यदि किसी किरायेदार ने किराया चुकाने का उचित प्रस्ताव दिया है और मकान मालिक ने उचित रूप से इसे स्वीकार करने से इनकार कर दिया है, तो किरायेदार खंड (डी) के तहत बेदखली के दायित्व से नहीं बच सकता, जब तक कि वह यह साबित न कर दे कि उसने आगे डाक मनी ऑर्डर द्वारा किराया भेज दिया था। यह स्थिति पूरी तरह से स्थापित है। यदि इस दृष्टिकोण से स्थिति का विश्लेषण किया जाए तो यह देखा जाएगा कि खंड(डी) धारा 13 केवल वहीं लागू होगी जहां बिहार किराया अधिनियम की धारा 13 लागू होती है। यदि धारा 13 किसी विशेष स्थिति पर लागू नहीं होती है, तो खंड (डी) भी लागू नहीं होगा। धारा 13 स्पष्ट रूप से अधिनियम के संबंधित क्षेत्र में विस्तारित होने से पहले लागू नहीं हो सकती थी। इसलिए यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि पूर्व अवधि के लिए चूक धारा 11(1)(डी) के तहत बेदखली के आदेश का आधार नहीं हो सकती।

9. श्री एफ.एस. नरीमन, जिन्होंने उत्तरदाता की ओर से भी बहस की, ने कमजोर ढंग से सुझाव दिया कि छावनी क्षेत्र में बिहार किराया अधिनियम का विस्तार छावनी (किराया नियंत्रण कानूनों का विस्तार) अधिनियम, 1957 की धारा 3 की उपधारा (2) और (4) के मद्देनजर पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू माना जा सकता है। डॉ. चिताले ने *श्रीमती संत कौर और एक अन्य बनाम गणेश चौधरी*, एआईआर 1949 पटना 137 के फैसले के कंडिका 8 में पूर्वव्यापी प्रभाव के प्रश्न पर की गई टिप्पणी का भी उल्लेख किया। हमें इस तर्क में कोई दम नहीं लगता। बिहार किराया अधिनियम की भाषा स्पष्ट है और इसके भावी स्वरूप के बारे में कोई संदेह नहीं है। जहाँ तक धारा का संबंध है... छावनी अधिनियम की धारा 3 के संबंध में, उपधारा (2) केवल केंद्र सरकार को कुछ सीमाओं के अधीन किसी भी किराया अधिनियम को पिछली तिथि से लागू करने की अनुमति देती है, और उपधारा (4) वर्तमान संदर्भ में अप्रासंगिक है क्योंकि इसका दायरा किसी छावनी क्षेत्र में किराया कानून के विस्तार से पहले पारित आदेशों और डिक्री से संबंधित है। जब यह बात श्री नरिमन को बताई गई, तो उन्होंने अपने तर्क को आगे नहीं बढ़ाया, और डॉ. चिताले ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि बिहार किराया अधिनियम की व्याख्या छावनी क्षेत्र में पूर्वव्यापी प्रभाव से लागू होने के रूप में नहीं की जा सकती। इस दृष्टिकोण से, हमें इस बिंदु पर और अधिक विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

10. श्री नरिमन ने अंत में यह तर्क दिया कि अपीलकर्ता ने दिसंबर 1973 से अप्रैल 1974 तक, यानी पांच महीने की अवधि के लिए भी किराया भुगतान में चूक की थी, जब अधिनियम छावनी क्षेत्र में लागू हुआ था, और इसलिए आक्षेपित डिक्री को रद्द नहीं किया जाना चाहिए। अपीलकर्ता की ओर से यह सुझाव दिया गया कि प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय के कंडिका 12 में दिए गए निष्कर्ष के मद्देनजर यह माना जाना चाहिए कि बाद की अवधि के लिए उत्तरदाताओं के चूक के मामले को खारिज कर दिया गया था। हमने प्रथम अपीलीय न्यायालय और उच्च न्यायालय के निर्णयों का अध्ययन किया है और हमने पाया है

कि बाद की अवधि के लिए कथित चूक से संबंधित विवाद अनसुलझा रह गया है। चूंकि यह प्रश्न पक्षों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों के मूल्यांकन पर निर्भर करता है, इसलिए हमारा मत है कि मामले को प्रथम अपीलीय न्यायालय को इस प्रश्न पर निर्णय के लिए वापस भेजा जाना चाहिए कि क्या वादी-मकान मालिक ने उत्तरदाता-किरायेदार द्वारा दिसंबर 1973 से अप्रैल 1974 की अवधि के लिए किराए के भुगतान में चूक साबित कर दी है। यदि माननीय अधीनस्थ न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि किरायेदार ने बिहार भवन (पट्टा, किराया और बेदखली) अधिनियम, 1947 की धारा 11(1)(डी) के अर्थ में इस अवधि के दौरान दो महीने या उससे अधिक समय तक चूक की है, तो वे वाद का फैसला सुनाएंगे; अन्यथा वाद खारिज कर दिया जाएगा।

11. परिणामस्वरूप, अपील स्वीकार की जाती है, उच्च न्यायालय और प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय अपास्त किए जाते हैं और मामला उपरोक्त टिप्पणियों के आलोक में नए सिरे से निर्णय के लिए प्रथम अपीलीय न्यायालय को वापस भेजा जाता है। वाद के अंतिम निर्णय के अनुसार लागत का भुगतान किया जाएगा।

जी.एन.

अपील स्वीकार की गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।